* **शून्य बेरोजगारी**
* **शून्य गरीबी**
* **शून्य कुपोषण**
* **शून्य मुकदमेबाजी**
* **और साफ-सुथरे व हरे-भरे गांवों**

के सपने को सच कर दिखाया है। वह भी निर्धारित समय सीमा से पूर्व।

उल्लेखनीय है कि दीनदयाल शोध संस्थान द्वारा चलाई जाने वाली योजनाओं में गरीब परिवारों, चाहे वो किसी भी जाति या संप्रदाय से क्यों न हों, की सक्रिय भूमिका से उन्हें स्वावलंबी बनाने के प्रयासों में दुर्लभ पूरकता भी हासिल कर ली है। यह भी महत्त्वपूर्ण है कि इन लक्ष्यों को संस्थान ने निर्धारित समय सीमा से पहले ही पूरा कर लिया। संस्थान अब इस दशक के अंत तक इन लक्ष्यों को 500 गांवों में प्राप्त करने की ओर अग्रसर है। और यह चमत्कार किसी सरकारी एजेंसी ने नहीं किया है। इलाके के लोगों ने दीनदयाल शोध संस्थान के निस्वार्थी व उत्साही कार्यकर्ताओं के निकट सहयोग से इस महती लक्ष्य को पूरा किया है। संस्थान तो केवल प्रेरणा देने का काम करता है। वास्तविक ऊर्जा व क्षमता तो लोगों के भीतर है।

पुरानी पीढ़ी के कई उद्योगपतियों को याद होगा कि सन् 1977 में सक्रिय राजनीति से सन्यास लेते समय मैंने उनसे सामुदायिक विकास के कार्यों में सक्रिय भागीदारी देने का आग्रह किया था। मेरा हमेशा से मानना रहा है कि देश के उद्योगपतियों में विलक्षण प्रबंधकीय प्रतिभा और क्षमताएं हैं। औद्योगिक घरानों की उत्तरोत्तर प्रगति में उनके ये गुण परिलक्षित भी होते हैं। लेकिन सामाजिक व सामुदायिक गतिविधियों में उनका इस्तेमाल नहीं हो रहा है। 1977 में मैंने जब फिक्की के तत्कालीन अध्यक्ष श्री हरिशंकर सिंघानिया से अपने संगठन के माध्यम से उद्योगपतियों को सामुदायिक विकास गतिविधियों के लिए प्रेरित और संगठित करने का निवेदन किया था। उसके परिणामस्वरूप कई उद्योगपति अपनी व्यक्तिगत क्षमताओं व प्रयासों के साथ इसके लिए आगे भी आए थे। परंतु दुर्भाग्य से यह प्रयास एक सामूहिक गति नहीं प्राप्त कर पाया। मैं एक बार पुन: सभी औद्योगिक व व्यापारिक संगठनों का आह्वान करता हूं कि वे आगे आएं और विकास के इस महायज्ञ में योगदान देने के लिए अपने सदस्यों को प्रेरित करें।

शुभाकांक्षी -

नाना देशमुख

(नाना देशमुख)

दिनांक: 16 मई, 2005

प्रिय युवा बंधुओं और बहनों,

गत 24 दिसम्बर, 2004 के पत्र में मैंने लिखा था कि "संसद के दोनों सदनों के सांसद मिलकर स्वयं अपना वेतन, भत्ता तथा पेन्शन बढ़ा लेते हैं। जनप्रतिनिधियों द्वारा अपनाया गया यह तरीका न नैतिक है न ही प्रशासनिक नियमों के अनुकूल है।" सांसदों की इस स्वार्थसिद्धि को आम लोगों की नजर में ला देने के बाद लोकसभा स्पीकर माननीय सोमनाथ जी चॅटर्जी ने पहलकर सांसदों के वेतन तथा भत्ते बढ़ाने के लिए एक स्वतंत्र व्यवस्था खड़ी करने के लिए प्रयास प्रारंभ किए हैं। अत: मैं उनका हार्दिक अभिनंदन करता हूँ।

किन्तु इतने भर से भारत के भविष्य-निर्माण का मार्ग प्रशस्त नहीं होगा। अभी-अभी कुछ ही दिन पूर्व शहीद भगत सिंह का लोक सभा परिसर में स्मारक बनाने के लिए आयोजित सांसदों के सम्मेलन में महामहिम राष्ट्रपति महोदय ने विधायकों की खरीद-फरोख्त पर चिंता व्यक्त की है। इस खरीद-फरोख्त के घृणित आचरण से पार्टियों के बड़े से बड़े नेता स्वयं को अलिप्त नहीं कह सकते। सत्ता पाने या सत्ता में बने रहने के लिए चाहे जो किया जा रहा है, यह किसी से छिपा नहीं है।

सन् 2020 तक देश को स्वावलंबी बनाने के राष्ट्रपति के सपने को राजनीतिक दलों के उपर्युक्त आचरण से नुकसान पहुंचने की संभावना से राष्ट्रपति को चिंता होने लगी है। अन्यथा वे विधायकों के खरीद-फरोख्त के विषय की खुले शब्दों में आलोचना नहीं करते।

स्वतंत्र भारत के नेतृत्व ने अपने गौरवपूर्ण अतीत से संबंध-विच्छेद कर लिया है। अपने देश के लिए, अपनी प्रतिभा से, अपने जीवन-मूल्यों पर आधारित संविधान निर्माण करने में अपनी स्वतंत्र बुद्धि काम में ही नहीं लाई गयी। सवा सौ साल से अधिक हमें गुलामी में जकड़े रखने वाले अंग्रेजों द्वारा प्रचलित संसदीय लोकतंत्र की द्वंद्वात्मक शासन प्रणाली हमने अपने लिए स्वीकार की। परिणामस्वरूप, स्वतंत्र भारत की राजनीति लोकतंत्र के विकास के स्थान पर व्यक्तिवाद की जननी बनी। आज हम देश में राजनीतिक दलों का चुना हुआ नेता देख नहीं पाते। हर नेता अपनी मर्जी से जब चाहे नया दल बना लेता है। अत: इसे लोकतंत्र की नहीं, सामंतशाही की तिरस्कृत दिशा कहा जाय तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी।